CIF IMPACT FACTOR:4.465

North Asian International Research Journal of Multidisciplinary

ISSN: 2454-2326 Vol. 3, Issue-10 October-2017

जीवन मूल्यों के परिपेक्ष्य में समायोजन

चन्द्रदीप पाण्डेय*

*पी०एच०डी०(शिक्षाशास्त्र) छात्र
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा
धारवाड़, कर्नाटक

मानव–समाज सदा से मूल्यों, आदर्शों और चिंतन की व्यवस्था रहा है। मानव की यह विशेषता है कि वह व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन के लिए लक्ष्य, आदर्श और उन्हीं के अनुरूप अपना जीवन–यापन करता है। पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तान्तरित होते हुए ये आदर्श परम्परा बन जाते हैं। प्रत्येक समाज में विचारने, अनुभूति करने और व्यवहार करने की परम्पराओं की समन्वित व्यवस्था, संस्कृति कहलाती है। हर संस्कृति की अपनी अनूठी सुगंध होती है, विशिष्टता होती है, केन्द्रीय भाव होता है। संस्कृति वह दर्पण है जिसमें पूरे समाज का प्रतिबिम्ब होता है। संस्कृति के माध्यम से किसी समाज के व्यक्तित्व का अध्ययन किया जा सकता है, क्योंकि संस्कृति वह है जो व्यक्ति और समाज होना चाहते हैं। संस्कृति का एक विशिष्ट संगठन अंग है 'आचरण–संहिता', जो उस समाज में नीतिभाषित और निर्धारित होती है। नीतिशास्त्रीय दृष्टि से सम्यक आचरण की कसौटियाँ परिभाषित और निर्धारित होती हैं। नीतिशास्त्री ही यह तय करता है कि किस आचरण को श्रेष्ठ कहा जाए और किसको निकृष्ट कहा जाए? क्या 'अच्छा' है और क्या बुरा है? क्या उचित है और क्या अनुचित है? क्या नेकी है और क्या 'बदी' है? 'नीति' शब्द ही आगे ले जाने की क्रिया है। सीधे–साधे शब्दों में, व्यक्ति या समाज के लिए आचार–व्यवहार, निर्देशन करने वाले नियम और संहिताएं ही नीति हैं। मानव के लिए जीवन जीना ही पर्याप्त नहीं है, उसके लिए यह भी अभीष्ठ है कि जीवन जीने योग्य बने। आखिर जीवन का परम लक्ष्य क्या है? उस लक्ष्य की प्राप्ति के उपाय क्या हैं? जीवन जीने की कला क्या है? इन बातों को यदि शिक्षा नहीं सिखलाएगी तो कौन सिखलाएगा? इन मूल्यों के बिना हर शिक्षा अधूरी है।

अधिकांश मूल्यों का प्रतिबिम्बन समाज में हो रहा है। यह इस बात का प्रमाण है कि विद्यालय का परम्परागत कार्य संस्कृति का सम्प्रेषण है। यद्यपि हमारी संस्कृति का सम्प्रेषण तथा अवस्थिति आवश्यक है, फिर भी विद्यार्थियों को यह अधिकार होना चाहिए कि वे मूल्य तथा तथ्यपरक विषय–वस्तु में भेद कर सकें। यदि देखा जाए तो आज मूल्यों को तथ्यों के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। उदाहरण के लिए यह एक सामान्य सी बात है कि विद्यार्थी पाठ्यचार्य अथवा अध्यापकों से यह सीखते हें कि लोकतंत्र, जो हमारी शासन प्रणाली है, सबसे अच्छी शासन–प्रणाली है। यह एक मूल्य है जिसका प्रस्तुतीकरण तथ्य के रूप में किया गया है। परन्तु विद्यार्थी मूल्य को तथ्यों से अलग देखना नहीं सीख रहे हैं। अतः विद्यालयों को मूल्यों का प्रस्तुतीकरण इस प्रकार से नहीं करना चाहिए। नैतिक शिक्षा में मूल्य–स्पष्टीकरण प्रतिरूप के समर्थकों के विचार में सिद्धांतारोपणीय प्रतिरूप एक ढ़ोंगी प्रकार का तथा निष्फल प्रतिरूप है। वास्तव में मूल्यों को मन में बैठाना, उन्हें संजोए रखना सभी सिद्धांतारोपण के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है और वास्तवितकता यह है कि विद्यालयों में अथवा घर पर सामाजिक मूल्यों को विद्यार्थियों के मन में बैठाने सम्बन्धी सर्वोत्तम प्रयत्न जो यर्थाथरूप में सिद्धांतारोपण के अभिमुख हैं, असफल रहे हैं क्योंकि इन सब प्रयत्नों के बावजूद मूल्य उनके मन में नहीं बैठ पाए। हम देखते हैं कि व्यक्ति मंदिरों अथवा अन्य धर्मस्थलों में जाते हैं, सन्त समागम में उपस्थित होते हैं, इत्यादि, परन्तु वही लोग कर अपवचन करते हैं, अन्य व्यक्तियों का शोषण करते हैं और अन्य बहुत प्रकार के पाप करते हैं। यह एक अत्यन्त निराशाजनक स्थिति है जिस पर चिन्तन करना आवश्यक हो जाता है।

बुद्धि और अभियोग्यता के होते हुए यदि किसी छात्र में शिक्षा, शिक्षक तथा विद्यालय के प्रति सकारात्मक अभिवृत्तियों की कमी है तो अधिगम निश्चित रूप से कम होगा। शिक्षा और विषय के प्रति सकारात्मक अभिवृत्तियों विद्यार्थियों को अधिगम हेतु प्रेरित करती है। इनके प्रति सकारात्मक अभिवृत्तियाँ शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होती हैं जबकि नकारात्मक या तटस्थता के भावयुक्त अभिवृत्तियाँ उद्देश्यों की प्राप्ति में बाधक होती हैं। व्यक्ति सामाजिक परिस्थितियों में व्यक्ति के व्यवहार के मानसिक पक्ष से सम्बन्धित होती हैं। व्यक्ति के बाहय व्यवहार का यह एक महत्वपूर्ण कारक है। अभिवृत्तियों से व्यक्तित्व की उन प्रवृत्तियों की ओर संकेत मिलता है जिनके द्वारा किसी वस्तु, व्यक्ति अथवा प्रक्रिया के प्रति व्यक्ति के व्यवहार का निर्णय लिया जाता है।

अभिवृत्ति का शाब्दिक अर्थ है, विशेष वृत्ति। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो मन की वह विशेष वृत्ति जो किसी व्यक्ति, पदार्थ, परिस्थिति, संस्था मुद्दे या विचार के प्रति हमारे आचरण का स्वरूप निर्धारित करती है, जिसके कारण इनके प्रति हम अपनी कोई विशेष धारणा बना लेते हैं। फ्रीमैन (1971) के अनुसार ''अभिवृत्ति किन्हीं निश्चित परिस्थितियों, व्यक्तियों एवं वस्तुओं के प्रति संगत रूप से प्रत्युत्तर देने वाली वह स्वाभावित तत्परता है, जिसे सीखा जाता है तथा वह किसी व्यक्ति विशेष के प्रत्युत्तर देने की लाक्षणिक तरीका बन जाता है।

सामान्यतया किसी वस्तु अथवा क्रिया के प्रति यदि व्यक्ति को लम्बे समय तक संतोष प्राप्त होता है तो उसे वस्तु क्रिया के प्रति उसके मन में एक सकारात्मक भावना उत्पन्न होती है।

वर्तमान में शिक्षकों की कार्यप्रणाली मे ंसुधार के लिए, जिससे कि वे अपने कार्यों को बेहतर तरीके से संचालित कर सकें इसके लिए विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं जिससे शिक्षकों को विभिन्न कौशलों से समपृक्त किया जा सके।

शिक्षकों के बहुआयामी व्यक्तित्व में उनका समायोजन तथा कार्यसंतुष्टि स्तर ये दो महत्वपूर्ण आयाम हैं। एक शिक्षक की आत्मतुष्टि तथा समायोजन स्तर उसके शिक्षण कार्य को अत्यधिक प्रभावित करता है।

शिक्षकों का समायोजन स्तर शिक्षण को प्रभावित करता है साथ ही साथ शिक्षक के व्यवहार को भी।

समायोजन के द्वारा ही व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को सन्तुलित रखता है, जीवन में विषम से विषम परिस्थितियों में भी स्थायित्व बनाये रखता है। शिक्षकों में इस गुण का होना बहुत आवश्यक है।

शिक्षक विभिन्न परिस्थितियों में तथा विभिन्न संदर्भों में अनेक प्रकार के कार्य करता है, शिक्षक छात्रों का अवलोकन करता है, उनकी भावनाओं की अनुभूति करता है तथा अधिकाधिक समझने का प्रयास करता है, वह विषयवस्तु को छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत करता है, उसका विश्लेषण करता है, व्याख्या करता है, छात्रों के कार्यों का मूल्यांकन करता है। शिक्षक प्रक्रिया में एक ओर छात्र सीखने वाला है तो दूसरी ओर

शिक्षक सिखाने वाला। शैक्षणिक प्रक्रिया में प्रमुख संचालक के रूप में शिक्षक का स्थान अवश्य ही केन्द्रीय है, वह ने केवल शब्दों द्वारा ही वरन अपनी रूचि, अरूचि, आचार–विचार, रहन–सहन तथा अन्य मानवीय तत्वों द्वारा छात्रों पर गहरा प्रभाव छोड़ता है। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से छात्रों पर गहरा प्रभाव डालने वाला शिक्षक के सामन कोई दूसरा तत्व नहीं है।

एक श्रेष्ठ शिक्षक की सामायोजन क्षमता उसकी शिक्षण की उपयुक्त विधि तथा कार्य सन्तुष्टि ही उसे श्रेष्ठ बनाती है।

वर्तमान भौतिक सम्पन्नता की प्रतिस्पर्धा ने हर व्यक्ति के जीवन की सोच बदलकर रख दी है। कुछ व्यक्ति अपने तात्कालिक जीवन निर्वहन के लिए ऐसे अवस्थायें बतायी हैं–समन्वय, विभेदीकरण, आघात तथा अनुकूलन। अभिवृत्ति विश्वास, रूचि, अभिप्रेरणा आदि से भिन्न सम्प्रत्यय है। अभिवृत्ति एवं अभिप्रेरणा दोनों में व्यवहार किसी लक्ष्य से सम्बन्धित होता है। अभिवृत्ति अभिप्रेरणा की तुलना में अधिक स्थायी तथा व्यापक होती है। साथ ही अभिवृत्ति का सम्बन्ध विचारों से अधिक होता है क्योंकि इसकी उत्पत्ति अनुभवों के संगठन के आधार पर होती है जबकि अभिप्रेरणा में आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु लक्ष्य की ओर बढ़ने का प्रयास प्रमुख होता है। अभिवृत्ति समायोजन को प्रभावित करती है।

अभिवृत्ति एक व्यक्तिगत तत्व है जबकि विश्वास पर सांस्कृतिक कारकों का प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि अभिवृत्ति में परिवर्तन विश्वास की तुलना में अधिक शीघ्रता से होता है। साथ ही विश्वास का क्षेत्र अभिवृत्ति से अधिक व्यापक होता है। साथ ही अभिवृत्ति जब लक्ष्य बन जाती है तो वह मूल्य का रूप धारण कर लेती है। अर्थात अभिवृत्तियाँ जीवन मूल्य का अधार होती हैं।

प्राथमिक शिक्षा सम्पूर्ण प्रणाली की नींव होती है। प्राथमिक शिक्षा प्रापत करने वाले किसी भी समाज व राष्ट्र के भविष्य के रूप में देखे जाते हैं। इस भविष्य को सही दिशा देने की जिम्मेदारी शिक्षकों पर होती है शिक्षा की प्रक्रिया एक बहुआयामी तथा व्यापक प्रक्रिया है, जिसमें शिक्षक का स्थान अति महत्वपूर्ण है। शिक्षार्थियों में विभिन्न गुणों, विशेषताओं आदि का सृजन करना शिक्षकों की ही कार्यप्रणाली की परिधि में आता है। छात्र रूपी कोरी स्लेट पर कुछ लिखने का काम शिक्षक ही करता है। यह समस्त कार्य प्रणाली तभी एक व्यवस्थित तथासमन्वय के साथ उन्नयन की दिशा में गतिशील होगी जब शिक्षक स्वयं कर्त्तव्यनिष्ठा एवं दायित्व

बोध के साथ अपने क्रियाकलापों का संचालित करेगा क्योंकि शिक्षकों के बहुआयामी व्यक्तित्व का प्रभाव उनके छात्रों पर प्रत्यक्षतः स्पष्ट रूप से पड़ता है। यदि शिक्षक ही नहीं है, अतः वह अपने कार्य को पूर्ण रूप से कर्त्तव्यनिष्ठ होकर नहीं करते हैं कहीं पर सरकारी विद्यालयों में आने–जाने के साधनों का अभाव, पीने के पानी की व्यवस्था का अभाव, कहीं पर ग्रामीण परिवेश शिक्षकों के कार्य पर प्रभाव डालता है। यह अभावपूर्ण वातावरण शिक्षकों की कार्य–सन्तुष्टि को प्रभावित करता है।

प्रबन्ध–तन्त्र शिक्षकों पर मानसिक प्रभाव डालता है। शिक्षकों के वेतन में भिन्नता तथा हर समय नौकरी से निकाले जाने का भय शिक्षको, पर हावी रहता है, जो उनकी कार्य–सन्तुष्टि को प्रभावित करता है।

शिक्षकों की कार्य–सन्तुष्टि पर प्राचार्य सहयोगी शिक्षकों को भी अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। यदि प्राचार्य व साथी शिक्षकों के साथ शिक्षक के सम्बन्ध आत्मीय नहीं हैं तो कार्य करना मुश्किल हो जाता है। शिक्षक का आधा समय उनके और अपने सम्बन्धों को सुधारने या एक–दूसरे को नीचा दिखाने तथा प्राचार्य और प्रबन्ध–तन्त्र की नजरों में चढ़ने की कोशिश में चला जाता है। ऐसी परिस्थिति में शिक्षण–कार्य की तरफ उनका ध्यान कम ही रहता है। शिक्षकों की कार्य–सन्तुष्टि होती है शिक्षण–कार्य से और उपर्युक्त परिस्थितियों में कार्य–सन्तुष्टि होना नामुमकिन है।

शिक्षक एकाग्रचित और समर्पित होकर शिक्षण कार्य कर सकें, इसके लिए आवश्यक है कि विद्यालयों में प्रबन्ध–तन्त्र नौकरी से निकाल देने के भय से शिक्षकों को मुक्त करने के साथ–साथ वेतन में भी समय–समय पर बढ़ोत्तरी करें।

प्राचार्य शिक्षकों के प्रति अपना व्यवहार सामान्य रखें तथा अपने पद का अनावश्यक दबाव शिक्षकों पर न बनाये। इसके अतिरिक्त शिक्षकों के लिए सबसे आवश्यक बात है कि उन्हें आपसी द्वेष में न पड़कर पूर्ण रूप से शिक्षण के प्रति समर्पित होना चाहिए। शिक्षक को यदि छात्रों के सम्मुख आदर्श प्रस्तुत करना है, तो उन्हें विद्यालयी राजनीति में न पड़कर अपने कार्य को पूर्ण निष्ठा के साथ करना चाहिए। छात्रों को प्रेम, सहयोग, ईमानदारी व अनुशासन जैसे गुणों का पाठ पढ़ाने के लिए स्वयं में इन गुणों को विकसित करना होगा।

व्यवसाय को ग्रहण करते हैं जो उनकी आकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करता है। ऐसे व्यक्ति तनाव या मानसिक स्थिति से हमेशा ग्रस्त रहते हैं। वह व्यक्ति यदि शिक्षक हों तो फिर उससे अपने उत्तरदायित्व एवं कर्त्तव्यों के समुचित निर्वहन की परिकल्पना कैसे की जा सकती हैं। कार्य–सन्तुष्टि के मापन से ही यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि शिक्षक अपने शिक्षण व्यवसाय से कितना संतुष्ट है। इससे उसे आत्मोपलब्धि प्राप्त होती है या नहीं।

समाज में शिक्षक की भूमिका अति महत्वपूर्ण होती है। विशेषतः प्राथमिक स्तर का शिक्षक उत्कृष्ट राष्ट्र के निर्माण का शिल्पकार होता है। उसके द्वारा तराशा गया हर एक बालक राष्ट्र के भूत, भविष्य व वर्तमान का द्योतक है। शिक्षक के व्यक्तित्व का अभीष्ट प्रभाव बालकों के कोमल मन–मस्तिष्क पर गहराई से पड़ता है। इसलिए शिक्षक अपने कार्यों के निष्पादन में जिस आचरण व व्यवहार को प्रकट करता है वह उसकी कार्य–संतुष्टि को चिहिन्त करता है।

शिक्षक यानि ज्ञान रूपी पल्लवित करने वाला वृक्ष। सभ्य समाज में प्रारम्भ से ही शिक्षक का स्थान सम्मानीय रहा है। लेकिन परिस्थितियों और समाज के बदलने के साथ ही शिक्षण ने एक व्यवसाय का रूप ले लिया है। जो कार्य शिक्षक प्रारम्भ में समाज को सभ्य और शिक्षित बनाने के लिए पूर्ण समर्पित भाव से करते थे और बदले में कुछ प्राप्ति का भाव नहीं रखते थे, आज वही कार्य रोजगार के रूप में देखा जाता है और धन प्राप्ति कर जीवन–शैली को आधुनिक बनाने के प्रयास के रूप में देखा जाता है।

वर्तमान में व्यक्ति शिक्षा प्राप्त कर शिक्षक बनने का ख्वाब सिर्फ इसलिए देखता है कि वह कम–से–कम कार्य के घण्टों में अधिक–से–अधिक धन की प्राप्ति कर सके। लेकिन बहुत कुछ ये सत्य व्यक्ति की परिस्थितियों पर निर्भर है। आधुनिकता का बढ़त प्रभाव शिक्षकों के कार्य पर भी पड़ता है। न तो आज का विद्यार्थी पढ़ना चाहता है और न ही शिक्षक पढ़ाना चाहते हैं। योग्य शिक्षकों के चयन पर भी रिश्वत और भ्रष्टाचार का प्रभाव है।

इन परिस्थितियों को बावजूद यदि कोई शिक्षक पढ़ाना चाहता है तो उसके आसपास के विभिन्न कारण उसके कार्य पर प्रभाव डालते हैं। यहां यह प्रश्न महत्वपूर्ण रूप से उभरता है कि एक शिक्षक अपनी भूमिका में कहाँ तक विविध मनोवैज्ञानिक कारकों से प्रभावित होता है। समायोजन के लिए व्यक्ति को स्वयं

प्रयत्न करना पड़ता है और इसके लिए उसे वांछनीय शिक्षा की आवश्यकता होती है। समायोजन यर्थाथ पर आधारित होता है और व्यक्ति को संतोष प्रदान करता है। इतना ही नहीं, सुसमायोजन के फलस्वरूप व्यक्ति कुंठाओं एवं द्वन्द्वों के कुप्रभावों से बचा रहता है।

शेफर तथा शोबेन ने समायोजन के सन्दर्भ में दो प्रकार के व्यवहारों का उल्लेख किया है। इनके अनुसार एक प्रकार का व्यवहार तो समाकलनात्मक होता है। समाकलनात्मक व्यवहार से तात्पर्य बहुत कुछ वही है जिसे हम सामान्य एवं वांछनीय व्यवहार कहते हैं। दूसरे प्रकार का व्यवहार असमाकलनात्मक होता है। समायोजन की दृष्टि से असमाकलनात्मक व्यवहार अवांछनीय माना गया है।

शेफर तथा शोबेन ने इस बात पर बल दिया है कि समाकलित समायोजन की व्याख्या करते समय व्यक्ति और उसके सामाजिक समूह के मध्य आपसी आदान–प्रदान की ओर ध्यान देना आवश्यक है। व्यक्ति अपने समाज में अपना स्थान बनाये रखने के लिये अपने में कुछ परिवर्तन करता है और इस बात का ध्यान रखता है कि दूसरे लोग उसे समुचित आदर प्रदान करें। सामाजिक रीति रिवाजों का पालन करते हुए व्यक्ति समाकलित समायोजन कर लेता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जब हम समाकलनात्मक व्यवहार के आधार पर समायोन के स्वरूप की व्याख्या करते हैं तब इसके परिणाम आयाम की ओर ध्यान देना अत्यन्त आवश्यक होता है।

शेरफ और शोबेन के अनुसार, ''यदि कोई व्यक्ति अपनी संस्कृति'' के सदस्यों का बिना विचार करते हुए अपनी इच्छाओं को पूरा करता है तो उसके लिए न केवल प्रतिरोध का खतरा उत्पन्न होता है वर्न वह उन उद्देश्यों की पूर्ति में सहयोग की सम्भावना से वंचित रह जाता है जो कि दोनों व्यक्ति और समाज के लिए महत्व के हैं।

समायोजन और समाज के सन्दर्भ में सामाजिक मूल्यों तथा आदर्शों को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। हमें यह ज्ञात है कि प्रत्येक समाज के अपने मूल्य तथा आदर्श होते हैं। समाज इस बात की आशा करता है कि उसके सभी सदस्य सामाजिक मूल्यों तथा आदर्शों के अनुरूप जीवन व्यतीत करेंगे। लेकिन जब कभी कोई समाज रूढ़ियों सें ग्रस्त हो जाता है और देश काल की परिस्थितियों के अनुसार अपने में परिवर्तन नहीं लाता तब ऐसे समाज में व्यक्ति के लिए समायोजन प्राप्त करना कठिन होता है। समाज में रहते हुए दूसरे लोगों की

सुख–सुविधा का ध्यान रखकर जब कोई व्यक्ति जीवन व्यतीत करता है तब उसका समायोजन संतोषप्रद माना जाता है। एक अध्यापक के सन्दर्भ में समायोजन अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि अपनी सामाजिक और व्यवसायिक भूमिका के लिये उसका अपनी संस्था के साथ सुसमायोजित होना आवश्यक है।

REFERENCES

- अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, पृष्ठ–10 नई दिल्ली अप्रैल 2003
- डॉ0 भरत सिंह नेगी, शैक्षिक संस्थाएं और मानवीय मूल्य, रोजगार समाचार नई दिल्ली, 14–20 फरवरी 2004 पृष्ठ–1
- गौड़ पूनम, मूल्य–परक शिक्षा की महत्ता का स्वरूप, प्राइमरी शिक्षा, एन0सी0ई0आर0टी0 नई दिल्ली, जनवरी 2001, पृष्ठ–40
- अग्निहोत्री, डॉ0 प्रशान्त, बुनियादी शिक्षा दर्शन में मूल्य शिक्षा, प्राइमरी शिक्षक, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसांधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली, जुलाई 2004 पृष्ठ–14
- मिश्र, डा0 प्रेमचन्द्र, आज का विकासात्मक मनोविज्ञान, साहित्य प्रकाशन आगरा, 2002, पृष्ठ–164